स्त्री–विरोधी कुप्रथाओं को चुनौती देता मृणाल पाण्डे का साहित्य

3

डॉ0 मंजुल मठपाल*

प्रसार भारती की पूर्व अध्यक्ष एवं 'हिन्दुस्तान टाइम्स समूह' के लिए प्रमुख सम्पादक का कार्य कर चुकीं मृणाल पाण्डे यूँ तो आमतौर पर एक कुशल समाचार–वाचिका और जीवट पत्रकार के रूप में जानी जाती हैं किन्तु कार्यक्रम प्रस्तोता के रूप में भी अपनी अमिट छाप हमेशा से छोड़ती रही हैं। वह इतिहास, चित्रकला और संगीत में विशेष रूचि रखती हैं। इस सब के बाद भी अंग्रेज़ी और हिन्दी साहित्य में अपनी विशिष्ट लेखन– शैली के कारण सशक्तता से न केवल अपनी उपस्थिति दर्ज कराती हैं वरन् समकालीन स्त्री–चिन्तकों और स्त्री–लेखिकाओं से अलग प्रभाव छोड़ती हैं।

दूरदर्शन और आकाशवाणी में तो उनका योगदान समय–समय पर होता रहा है। वर्ष 1988 में 'स्त्री की कानूनी साक्षरता' को लेकर तेरह भागों का एक धारावाहिक "अधिकार", वर्ष 1994 में जी0टी0वी0 पर स्त्रियों के लिए एक कार्यक्रम "शक्ति" तथा वर्ष 1999 में 'भारतीय स्त्री की दशा और दिशा' पर एक कार्यक्रम 'दृष्टिकोण' प्रस्तुत किया।

जुलाई 1988 में 'मानव संसाधन विकास मंत्रालय' के 'स्त्री एवं बाल विकास विभाग' के अन्तर्गत स्वकामकाजी महिलाओं के लिए राष्ट्रीय आयोग की सदस्या रहते हुए आयोग की रिपोर्ट "श्रमशक्ति" प्रधानमंत्री को सौंपी।

मृणाल पाण्डे ने अपने व्यक्तित्व के अनुरूप ही साहित्य में भी सपाटबयानी ही की है। किसी भी मुद्दे पर मय आँकड़ों के दो–टूक बात कहना उनकी खास पहचान है। मृणाल की माँ और प्रसिद्ध लेखिका शिवानी, मृणाल से कहा करतीं– "तेरे स्वभाव में भी तेरी ही तरह एक अकड़ है। याद रखना, एक तो ये और दूसरा तेरा सम्पादकी का काम, दोनों मिलकर अन्त तक तुझे भी मेरे जैसा इकलखोरा बना सकते हैं।"[1]

मृणाल पाण्डे का दूसरा ही उपन्यास "पटरंगपुर पुराण", जिसे आँचलिक उपन्यासों की श्रेणी में रखा जा सकता है। यह पाठकों के सामने स्त्रियों की सोच के विविध आयामों को सामने लाता है। 'पटरंगपुर पुराण' में पूरी कथा को अशिक्षित–अर्द्धशिक्षित स्त्रियों के दृष्टिकोण से कहा गया है। लोक–संस्कृति के

*निहारिका निवास, सेण्ट क्लाउड, सात नंबर,मल्लीताल, नैनीताल जिला– नैनीताल–उत्तराखण्ड।

बहाने मृणाल पाण्डे ने दहेज और सुरापान जैसी स्त्री विरोधी कुप्रथाओं पर चोट की है।

मूलतः अंग्रेजी भाषा की रचना 'देवी' में मृणाल ने देवियों का साम्य स्त्रियों से दिखाया है। इसमें देवी को आम स्त्री के रूपक में बाँध दिया गया है। सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती की कथा के विश्लेषण के बाद अहिल्या, द्रौपदी, तारा, कुन्ती और मन्दोदरी की पीड़ाओं का मूल उनके द्वारा सत्य और स्वतंत्रता से जुड़ने का प्रयास बताया गया है। पूरे देश के विभिन्न भाषा–भाषियों की देवी कहीं न कहीं स्त्री से जुड़ी है। चाहे उनके नाम उत्तर से दक्षिण भारत तक बदल जाते हों। मृणाल ने इस उपन्यास–रिपोर्ताज के माध्यम से दिखाया है कि सभी तेजस्वी स्त्रियों को मार–पीट कर उसी समाज का हिस्सा बना दिया जाता है जिससे लड़ती हुई वे आगे बढ़ती हैं।

'डॉटर्स डॉटर' नाम से मृणाल पाण्डे की मूल रचना तो अंग्रेज़ी भाषा में है किन्तु उपन्यास की मूल भावना को सुरक्षित रखते हुए "हमका दियो परदेस" नाम से इसका सफल अनुवाद मधु बी0 जोशी ने किया है। इसमें एक संवेदनशील बच्ची 'टीनू' देखती है कि घर–परिवार–समाज में लोग बेटों के बेटों को तो सम्मान देते हैं किन्तु बेटियों की बेटियों को तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं। सारे सम्बन्धों के छद्म खोलती हुई बच्ची घर से लेकर पूरे कस्बे के बारे में बताती चलती है।

मृणाल पाण्डे की कहानियों के बारे में चर्चा की जाए तो ये स्त्री–विरोधी कुप्रथाओं को सीधी चुनौती देती हैं। स्वयं मृणाल का कहना है कि उनकी कहानियाँ पाठकों की थोथी उपदेश–तृष्णा नहीं बुझा सकती।

मृणाल के चर्चित कहानी–संग्रह "चार दिन की जवानी तेरी" की पहली ही कहानी "लड़कियाँ" लड़का–लड़की में किये जा रहे भेदभाव की रूपरेखा खींच देती है। आज से तीस वर्ष पूर्व यह कहानी "धर्मयुग" में छप चुकी है किन्तु आज के समाज को प्रतिबिम्बित करती है। गौरेया को देखकर मात्र आठ वर्ष की एक लड़की अपनी माँ से पूछती है कि क्या गौरेया भी चिड़ियों में लड़कियों को कम अच्छा मानती होगी? वसंत ऋतु की नवरात्रि में अष्टमी की सुबह घर की सभी छोटी लड़कियों को इसलिए एकत्र कर लिया जाता है कि देवी मानकर उनकी पूजा की जायेगी। मँझली लड़की विद्रोह कर देती है और आवेश में कहती है–

"जब तुम लड़कियों को प्यार ही नहीं करते तो
झूठ–मूठ में उनकी पूजा क्यों करते हो?"[2]

यहाँ तक कि जब नानी मँझली लड़की को सवा रूपये देने लगती है तो उसे नानी के अंगूठे की नोंक पर लगा रोली का निशान खून का धब्बा जैसा लगता है। वह चिल्लाकर कहती है–

"मुझे नहीं चाहिए इन औरतों का हलवा–पूरी, टीका, रूपया।" "मैं देवी नहीं बनूंगी।"[3]

एक आठ वर्षीय बालिका के आक्रोश के माध्यम से मष्णाल ने समाज में व्याप्त खोखले आडम्बरों पर सीधा प्रहार करते हुए उन लोगों को आईना दिखाने की कोशिश की है जो प्रत्यक्ष में तो लड़कियों को देवी मानकर पूजा करते हैं किन्तु परोक्ष में अनेक प्रकार से उनका उत्पीड़न करते हैं।

आज स्त्री–चिन्तन चाहता है कि ज्ञान केवल विचारों पर ही नहीं बल्कि भावना पर भी आधारित हो। परम्परा ने स्त्री को परिभाषित करने की चेष्टा की। भक्तिकाल में स्त्री–भाव को परिभाषित किया गया और रीतिकाल ने स्त्री के रूप की परिभाषा दी। स्त्री–लेखन में अन्तर्निहित खामोशी को पहचान लिया गया है। मष्णाल पाण्डे कहती हैं– "स्त्रियों के लेखकीय अवदान पर फतवा देने का अंतिम अधिकार पुरूषों के पास प्रायः पड़ा रहा। औसत मध्यवर्गीय हिन्दुस्तानी पुरूष औरतों को लेकर अपनी मानसिकता के चलते लगभग स्कूल स्तर से ही ठिलठिलाकर या फिर अहमन्यता बोध के मारे दकियानूसी तिलमिलाहट के साथ ही देखते–जाँचते रहे।"[4]

इक्कीसवीं सदी की शुरूआत में ही मृणाल पाण्डे भारतीय स्त्री के स्वास्थ्य के बारे में जानने के लिए अपनी यात्रा पर निकलीं। इसका प्रतिफल उनकी पुस्तक "ओ उब्बीरी ....."(कोख से चिता तक : भारतीय स्त्री का प्रजनन और यौन जीवन) के रूप में वर्ष 2003 में सामने आया और इसने हमारे समाज, सरकार और बुद्धिजीवियों के सम्मुख स्त्री के उपेक्षित स्वास्थ्य की वास्तविक और भयावह तस्वीर पेश की। 'पहले भोजन, फिर परिवार नियोजन' नामक एक लेख में मृणाल पाण्डे सवाल उठातीं हैं– "देश की जनता की आबादी यदि सरकार की चिंता का विषय है तो उस आबादी के स्वास्थ्य की चिंता क्यों कर उसको न हो? स्त्रियों का भरोसा और सद्भाव को जीतने के लिए सरकार को उनकी प्रजनन शक्ति को 'नियोजन' की नहीं 'कल्याण' की दृष्टि से देखना होगा।"[5]

झुग्गियों पर आधारित एक सर्वेक्षण रिपोर्ट से मष्णाल को एक आश्चर्यजनक बात पता चली कि पुरूषों को अपनी पत्नियों के स्त्री–रोग की जानकारी न के बराबर थी। लगभग 50 प्रतिशत पुरूषों को पता ही नहीं था कि उनकी पत्नी ने कितनी बार गर्भधारण किया है। कई दाइयों से बातचीत में मष्णाल ने पाया कि दर्द उठते

समय भी सब स्त्रियों पर पुत्र ही जनने के लिए भयानक मानसिक दबाव होता है। मष्णाल स्त्री के स्वास्थ्य के प्रति व्यावहारिक रूप से कार्य न किये जाने को स्त्री–विरोधी ऐसी कुप्रथा मानती हैं जिसके दूरगामी दुष्परिणामों से समाज अभी भी अपरिचित है। मृणाल पाण्डे के लेख स्त्री–विरोधी ऐसी परम्पराओं को सीधी चुनौती देते हैं।

अनेक स्थानों पर मष्णाल अपने परिवारजनों, सगे–सम्बन्धियों की चर्चा के बहाने स्त्री का विरोध करती इन कुप्रथाओं को सामने लाती हैं। स्त्री को पढ़–लिखकर आत्मनिर्भर हो जाने की बात का समर्थन मष्णाल बार–बार करती हैं। लोग चाहे स्त्री को शिक्षा दिये जाने का विरोध करते रहें किन्तु उसी शिक्षा के द्वारा जब वह धन हासिल करने लगती है तो लोग उसके सम्मान में नज़रें झुका लेते हैं।

मृणाल पाण्डे मानती हैं कि उन्नीसवीं शताब्दी के समाज सुधार आन्दोलनों या सांस्कृतिक पुनरूत्थान धाराओं वाली सोच ही बीसवीं शताब्दी में स्त्रियों के लिये शिक्षा–योजनायें बनाने वाले योजनाकारों के सामने रहीं। स्त्रियों को पढ़ाने–लिखाने की आवश्यकता तो हर बार रेखांकित की गई पर समाज के पितृसत्तात्मक, पारिवारिक सामाजिक ढांचे से स्त्री की अशिक्षा को जोड़कर समाज की कार्यशैली में स्त्री को शक्ति सम्पन्नता प्रदान करने वाले कोई नये क्रान्तिकारी कदम नहीं उठाये गये।

इसे इस तरह समझा जाये कि कितनी भी अच्छी शिक्षा–नीतियाँ क्यों न रही हों, स्त्री के मस्तिष्क प्रक्षालन में सिद्धहस्त रही हैं और स्त्री को पुरूष की बराबरी का दर्जा दिलाने के बजाय स्त्री को यही सिखाती रही हैं कि वह घर–परिवार की पारम्परिक माँ–पत्नी की भूमिकाओं में स्वयं का सामंजस्य बेहतर तरीके से करे और मिल जाये तो घर से आज्ञा लेकर घर के बार चाकरी भी करे।

समाज के सम्मुख मृणाल पुनः एक विचारणीय प्रश्न रखती है– "पचास या सौ सफल महिलाओं के फेफड़ों के बूते आधी अरब आबादी प्राणायाम के फायदे स्थयी तौर से कैसे ले पायेगी?"[6]

मष्णाल ने अपने साहित्य में 'भ्रूण–हत्या' के कारणों और तथ्यों का यथासम्भव बारीकी से विश्लेषण किया है। मष्णाल नये फासीवाद को औरतों के लिए उस हितसाधक डॉक्टर का मुखौटा लगाये हुए मानती हैं जो उसको भेद–भरे स्वर में समझाता है कि अजन्मा शिशु अगर अल्ट्रासाउण्ड जाँच में 'नर' नहीं निकला तो वह चुपचाप 'कन्या–भ्रूण' की 'सफाई' करा सकता है।

आज गाँवों में जिसके अनेक जवान बेटे हों, ऐसा व्यक्ति अपनी तथा अपनी सम्पत्ति की रक्षा में अपेक्षाकृत अधिक समर्थ तथा बल–सम्पन्न माना जाता है और

जहाँ कानून की बजाय प्रायः डण्डे का ही राज चल रहा है, वहाँ नैतिकता के बजाय भुजबल का ही सम्मान होता है। यह हिंसक वातावरण स्त्रियों का सबसे बड़ा शत्रु और भ्रूण–हत्या का एक कारण बनता है।

मृणाल ने अपने साहित्य में यह स्पष्ट किया है कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था स्त्री के यौन–सम्बन्धों को उसका व्यक्तिगत मामला न मानकर उसे सामाजिक बनाती है। किन्हीं भी दो पुरूषों के मध्य झगड़ा भी हो तो उनके परिवार की महिलाओं के प्रति मौखिक या शारीरिक अपमान ओर यौनिक अपशब्दों में सामने आता है।

मृणाल समाज में यौन कर्मियों की स्थिति पर भी सरकारी तंत्र की विफलता को दोषी मानती हैं। उनका कहना है कि यौन कर्मियों को कंडोम–आपूर्ति करने में सरकार सीधे नहीं परोक्ष रूप से भागीदारी करती है। 'सामाजिक विपणन योजना' के अन्तर्गत यह कार्यक्रम होता है।

हम आए दिन अखबारों में आने वाली बलात्कार की खबरों को देखें तो पायेंगे कि जिनके साथ बलात्कार होता है, जरूरी नहीं कि वे सुंदर हों क्योंकि सौन्दर्य या उनका जवान होना बलात्कारी का मानदंड होता ही नहीं है। उसकी कसौटी यह होती है कि कहाँ सरलता से हमला किया जा सकता है?

मृणाल पाण्डे स्त्रियों को भी इस सब के लिए कम जिम्मेदार नहीं मानती। उनका मानना है – "हर मिस इंडिया मंच पर खड़ी होकर मदर टेरेसा के आश्रम या अनाथालयों में सेवा करने की भावुक कर देने वाली इच्छा भले ही जाहिर करे फिर भी मुकुट पहनने के बाद उनमें से अधिकतर मिस इंडिया बॉलीवुड फिल्मों में "आइटम नंबर" ही करेंगी।[7] यौनिक पवित्रता की सारी जिम्मेदारी स्त्री पर न डालकर समाज को यह सोच बदलनी होगी क्योंकि स्त्री को यौन–उपभोग की वस्तु समझने की घटिया सोच ही सारे अपराधों की जड़ है।

'चिमगादड़ें[8]' नामक कहानी में मृणाल केवल चार मुख्य पात्रों के द्वारा आम जन–जीवन को सूक्ष्मता से छूती हैं। कुरूपता का मुद्दा बातों ही बातों में ले आती हैं। कहानी की स्त्री–पात्र 'मारी' को कुरूप बताया गया है किन्तु उसे दूसरे भी कुरूप लगते हैं, ऐसा उसमें उत्पन्न कुढ़ने की भावना के कारण होता है। मष्णाल ने स्त्री की कुरूपता की समस्या को कहानी के कथानक के माध्यम से समाज के सामने रखते हुए यह बताने का प्रयत्न किया है कि अर्थशास्त्र की दुनिया भी कहीं–न–कहीं सुंदरता के शास्त्र से जुड़ी है।

वर्ष 1987 में लिखी कहानी "एक पगलाई सस्पेंस कथा"[9] में नायिका एक अनाथ कन्या है। विष्णुप्रिया नाम की एक कन्या जब नवयौवना बन जाती है तो

उसके रिश्तेदार उसका विवाह एक हकले फौज़ी अफसर से कर देते हैं, जो रिटायरमेंट के बाद मुर्गियाँ पालता था। उसके रिश्तेदार इस अनमेल विवाह के बाद एक लम्बी सांस लेते हैं।

जातिगत बंधनों को तोड़ते हुए अन्तर्जातीय विवाह की बात उन्होंने अपने चर्चित उपन्यास "पटरंगपुर पुराण"[10] में सामने रखी है।

"हंस"[11] के अक्टूबर 1993 के अंक में छपी मृणाल की कहानी "सुपारी फुआ" में परित्यक्ता का दंश झेलती केवल एक चित्र की तरह शतकीय जीवन बिताकर 'सुपारी फुआ' मरकर उसके अपने कुटुम्बीजनों को संतोष प्रदान कर जाती है।

परित्यक्ताओं के लिए भी एक 'पेंशन–फंड' बनाया जाना चाहिए और समाज में उसका वही मान–सम्मान होना चाहिए जो कि एक आम–स्त्री का है।

लेखिका आज के उपभोक्तावादी समाज की लालच भरी नैतिकता को दहेज जैसी कुप्रथाओं के लिए जिम्मेदार बताती हैं और अपने सम्पूर्ण साहित्य में दहेज–प्रथा पर चिन्ता व्यक्त कर युवा पीढ़ी से इसे रोकने में आगे आने को कहती हैं।

मष्णाल पाण्डे अन्य जटिल मानवीय मुददों की तरह स्त्री–प्रश्न को भी वर्तमान में पर्याप्त उलझा हुआ मानती हैं। स्त्रीवाद का समर्थन करने वाले लोग कई बार अवसर देखकर बदल जाते हैं और समय की कसौटी पर स्त्रीवाद के स्वस्थ प्रतिनिधि साबित नहीं होते। स्त्री–प्रश्न के प्रति उनकी गहरी प्रतिबद्धता है और वह देश के युवाओं का आह्वान करती हैं कि देश के युवा अपनी दुर्लभ ऊर्जा और क्षमता का नियोजन लिंगगत भेदभाव, वंशवाद, जातिवाद और साम्प्रदायिकता की दीवार ध्वस्त करने में करें।

लेखिका का मानना है कि हर भूल–सुधार की शुरूआत भूल के स्वीकार से होती है। लेखिका के साहित्य से यह स्पष्ट है कि घर के आँगन से ही स्त्री की स्थिति में सुधार हो तभी राजनीति और समाज तक एक स्वस्थ संदेश जायेगा। स्त्री को समाज से कटकर नहीं बल्कि समाज मे रहकर ही संघर्ष करना है। मृणाल पाण्डे के साहित्य में स्त्री–विरोधी कुप्रथाओं को चुनौती अन्य लेखिकाओं की तुलना में इन्हीं मायनों में एक अलग कतार में दिखाई देती है कि वह परिस्थितियों को केवल साहित्यकार की सैद्धान्तिक एवं भावनात्मक दृष्टि से नहीं देखती बल्कि एक कर्मठ पत्रकार की व्यावहारिक दृष्टि से भी देखती हैं।

संदर्भ–सूची

(1) मृणाल पाण्डे, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं
राधाकृष्ण प्रकाशन, 2008, पृ0–41

(2) मृणाल पाण्डे, चार दिन की जवानी तेरी (कहानी–संग्रह), प्र0सं0– 1995, प्र0आ0–1998, राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ0–19

(3) वही, पृ0–19

(4) मृणाल पाण्डे, साहित्य–वार्षिकी, इंडिया टुडे–1996,पृ0–72

(5) मृणाल पाण्डे, परिधि पर स्त्री (निबंध–संग्रह), राधाकृष्ण प्रकाशन, संस्करण–2002, दूसरी आवृत्ति–2008, पृ0–87

(6) मृणाल पाण्डे, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं, राधाकृष्ण प्रकाशन, पहला संस्करण–2006, दूसरी आवृत्ति–2008, पृ0–143

(7) मृणाल पाण्डे, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं, पहला सं 2006, दूसरी आवृत्ति–2008, राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ0–62

(8) मष्णाल पाण्डे, यानी कि एक बात थी (कहानी–संग्रह), राधाकृष्ण प्रकाशन– पहला संस्करण– 1990,आवृत्ति–2002, पृ0 18, 20

(9) मृणाल पाण्डे, चार दिन की जवानी तेरी (कहानी–संग्रह), राधाकृष्ण प्रकाशन, पहला संस्करण–1995, पहली आवृत्ति– 1998, पृ0–26

(10) मृणाल पाण्डे, पटरंगपुर पुराण

(11) सम्पादक–राजेन्द्र यादव, हंस (मासिक पत्रिका), अक्टूबर 1993